International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 10 Issue 10 Ser. I ||October, 2021 || PP.78-79

"पश्चिमी उत्तर प्रदेश की लोक कला का सांस्कृतिक अध्ययन"

डॉ० हेमन्त कुमार राय
एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष
चित्रकला विभाग
एम0एम0एच0 कॉलेज, गाजियाबाद

विनिता
शोध छात्रा
चित्रकला विभाग
एम0एम0एच0 कॉलेज, गाजियाबाद

भारतीय लोक कलाओं में संस्कृति तथा उसकी परम्पराओं का सजीव और सशक्त प्रतिबिम्ब देखने को मिलता है। लोक कलाएँ देशज एवं स्थानीय समाज की सामूहिक मान्यताओं द्वारा उद्घाटित होती है तथा दिशा पाती है। धर्म, संयम, आचार–विचार आदि का संश्लेषण इन कलाओं में दर्शनीय होता है। इनमें अंकित आकार उक्त घटकों के पर्याय होते है। इनकी बनावट संयोजन तकनीक आदि सब मिलकर एक विशिष्ट रचना शैली का सृजन करते है। इस प्रकार लोक कला किसी भी राष्ट्र की सांस्कृतिक धरोहर है। यह लोक कला बहुरंगी है। इसके कई उज्जवल स्वरूप है।

लोक कलाओं की सहज अभिव्यक्ति भी कला को एक मूल प्रवृत्ति सिद्ध करती है फिर भी इससे यह प्रमाणित हो गया है कि किसी संगठित सामाजिक व्यवस्था में ही कला का विकास हो सकता है। लोक कलाओं के भी विशेष केन्द्र होते है। जहाँ से वे प्रेरणा लेती है ऐसे केन्द्रों से दूर एकान्त क्षेत्रों में रहने वाले भी सहज रूप से कलाकृतियों की रचना करते है। यह सहजता भी किसी समूह का सामाजिक गुण है, क्योंकि ऐसी कला में अधिकांशतः सामूहिक भावनाओं की अभिव्यक्ति अंकन पद्धति के द्वारा की जाती है।

लोक कला का अध्ययन 19वीं शताब्दी से आरम्भ हुआ था। इससे पूर्व इस कला की और किसी का ध्यान नहीं गया था जब से इसका अध्ययन आरम्भ हुआ है, इसकी सीमाओं और परिभाषाओं के सम्बन्ध से यथेष्ट मतभेद रहा है, फिर भी इतना स्पष्ट है कि लोक कला मानव सभ्यता के इतिहास में एक ओर कला और दूसरी ओर कला के मध्य स्थित रही सुसंस्कृत है। लोक कला की उत्पत्ति एवं इतिहास के सम्बन्ध में भी मतैक्य नहीं है तथापि यह कहा जा सकता है कि यह एक पृथक वातावरण में प्राचीन परम्पराओं को अक्षुण रखने वाली कला है।

प्रत्येक क्षेत्र की मानव की सौन्र्यानुभूति उस क्षेत्र की कला में प्रकट होती है। सौन्दर्यानुभूति के साथ उस युग के आचार, व्यवहार, विश्वास, जीवन संघर्ष व संकल्पों एवं लोक जीवन की सम्पूर्ण झांकी को प्रस्तुत करने का कार्य लोक कलाओं द्वारा किया गया, लोक हमारे जीवन का भूत, भविष्य, वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है।

पश्चिमी उत्तर प्रदेश की लोक–कला संस्कृति के आदर्शो का स्वरूप है, वस्तुतः लोक कलाएँ संस्कृति की जननी भी है और पोषक भी क्षेत्र और परिस्थिति के अनुरूप सामाजिक मूल्यों, मान्यताओं और परम्पराओं में शनैः–शनैः होने वाले परिवर्तनों व संवर्द्धन को भी लोक कलाएँ प्रतिबिम्बित करती है।

हमारी परम्परागत लोक रूचियों को जीवित रखने के लिए पश्चिमी उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में लोक कलाओं ने जो अद्भुत कार्य किया है विज्ञान और दर्शन की दृष्टि से उसकी तुलना नहीं की जा सकती।

किसी भी विशिष्ट स्थान की लोक कलाएँ उस विशिष्ट स्थान की लोक संस्कृति पर आधारित होती है। लोक कलाओं की उत्पत्ति के स्त्रोत कुछ महत्वपूर्ण कारक है, जिनके सामंजस्य से लोक संस्कृति और लोक कलाओं का जन्म होता है और जो लोक कलाओं के स्वरूप को निर्दिष्ट और निर्धारित करते है इनमें लोक विश्वास, लोक चिंतन, लोकानुरंजन, लोक मूल्य और लोकाचार आदि महत्वूपर्ण है।

लोक कला किसी विशिष्ट व्यक्ति द्वारा सृजित नहीं होती। यह सामाजिक एवं अनुष्ठानिक प्रक्रियाओं के बीच प्रस्फुटित हुआ, वह वृक्ष है, जो धीरे–धीरे सामाजिक पोषण प्राप्त कर पल्लवित एवं फलित होता है। नाना प्रकार के लोक उसकी शीतल छाया एवं उसके मधुर फलों का रसास्वादन करते है। यह सब की सम्पत्ति है, किसी व्यक्ति विशेष की नहीं।

यह निरन्तर व्यवहार से इतनी प्रिय व पूजनीय बन जाती है कि यह विशिष्ट अनुष्ठानों, सांस्कृतिक पर्वो व उत्सवों का प्राण बन जाती है।

पश्चिमी उत्तर प्रदेश के अधिकांश गाँवों में लोक कलाएँ जीवन के विविध सांस्कृतिक तीज त्यौहारों आदि से जुड़ी हुई है। इन अवसरों पर जमीन में अथवा दीवारों पर मांगलिक प्रतीक चित्रित किये जाते है। जिसके लिए पिसा हुआ चावल, गेहूँ का आटा, सुखे रंग हल्दी, रोली आदि से काम चल जाता है। उपनयन एवं विवाह संस्कारों के समय स्त्रियाँ इस सामग्री से फूल पत्तियाँ लताएं आदि दीवारों पर अंकित करती है। शंख, आम पत्र कलश, सूर्य चन्द्र, स्वास्तिक, मछली, हाथी आदि मांगलिक प्रतीक उकेरे जाते हैं।

किसी भी समाज एवं समुदाय की संस्कृति का दर्पण उसकी संस्कृति एवं लोककला ही होती है। लोक कला हमारी संस्कृति एवं सभ्यता का श्रृंगार हैं कला का शाब्दिक अर्थ ही सुन्दर है। अर्थात् जो मन को प्रसन्न करती हो, जिससे मानव जीवन में सुन्दरता आती है। वह कला का स्वरूप है चाहे वह मानव जीवन को किसी भी रूप में प्राप्त है।

भारतीय वांड्गमय में लोक कला का प्रयोग प्राचीन काल से हो रहा है। लोग का कोषगत शाब्दिक अर्थ स्थान, विशेष संसार जन अथवा लोक समाज प्राणी यश आदि है। किन्तु 'लोक' शब्द की गहराई में जाने पर इसका आशय, इस

विशेष जन समूह से होता है जो साज–सज्जा, सभ्यता, शिक्षा, परिष्कार आदि से कोसो दूर मनोवृत्तियों के अवशेषों से युक्त है, जिसमें प्रकृति के नैसर्गिक सौन्दर्य की दिव्य आभा है।

भारत के पश्चिमी उत्तर प्रदेश में लोक कलाओं एवं लोक संस्कृति का प्रभाव अधिक दिखाई देता है। भारतीय संस्कृति की मूलभूत विशेषताओं की झलक पश्चिमी उत्तर प्रदेश के क्षेत्रों की लोक संस्कृति में विद्यमान है।

उत्तर प्रदेश प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति का मुख्य केन्द्र रहा है, साथ ही कतिपय संस्कृतियों का उद्‌भव भी उत्तर प्रदेश से हुआ है यहाँ भगवान राम, कृष्ण, बुद्ध तथा अनेक सन्तों की जन्म एवं कर्म स्थली रही है। प्रदेश के स्वतन्त्रता पश्चात चहुंमुखी विकास के आंकलन हेतु सांस्कृतिक स्तर पर विचार करना समाचीन होगा। विकास के इस यात्रा में कला एवं संस्कृति का भी उत्कृष्ट योगदान है।

लोक कला की एक ऐसी प्रवृत्ति है, जिसमें प्राचीन काल की सांझी आज भी लोक कला को समकालीन लोक कला में खड़ा पाते है, लोक कला की उत्पत्ति जादू टोना, धार्मिकता, अंधविश्वास के प्रति अलंकरण प्रवृत्ति से हुई है, वर्तमान में कला में काफी परिवर्तन देखने को मिलते है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में लोक कलाएँ आज भी प्रमुख रूप से प्रचलित है–

स्वास्तिक चिन्ह, सांसी, चौक पूरना, रक्षा बन्धन, करवाचौथ, अहोई, अष्टमी, दीपावली, गोवर्धन पूजन, हरछठ आदि के अवसरों पर गेरिक आलेखनों, मानचित्रों व वर्ण चित्रों एवं चावल की माड़ी, हल्दी, गेरू, खडिया आदि के आलेपनों द्वारा परम्परागत रूप से भित्ति चित्र अंकित किये जाते है।

क्षेत्र में शायद ही ऐसा कोई माह हो जिसमें यहाँ पर मनाए जाने वाले त्यौहारों में लोककला संस्कृति देखने को न मिले यहाँ प्रमुख रूप से दो चीजें खास तौर पर शामिल की गई है, पहली सांझी, दूसरी गोवर्धन पर बनाई जाने वाली आकृति भी शामिल है।

लोक कला का संस्कृति स्वरूप में कोई आडम्बर नहीं होता है। उसके निर्माण के तत्व बड़े सरल होते हैं, उसकी विधि व्यक्तिगत और स्थानीय होते है उसके विधान शिक्षण की कोई व्यवस्था नहीं होती है। पारिवारिक परम्परा में वह क्रमशः बनाई जाती है और बुजुर्गों से बच्चे देखकर ही उसे सीख लेते है। इस प्रकार लोक कला व संस्कृति स्वत संचालित व्यवस्था में जीवित रहती है और जिसको पीढ़ी दर पीढ़ी में संचालित किया जाता है।

उत्तर प्रदेश की लोक कला सांझी माई है कभी तालाबों की मिट्‌टी से सांझी माई के साथ पश्चिमी उत्तर प्रदेश की लोक कला प्रमुख रूप से सांझी माई है जो अभी भी है। सांझी माई बनाते है तो उसके साथ उनके भाई, आकाश में उडते तोते, वन में नाचता मोर, चांद, सूरज बनाए जाते थे, लेकिन सांझी माई बनाने की लोक कला विलुप्त होती जा रही है, क्योंकि बाजारों में आधुनिक मूर्तियाँ बिक रही है, जो लोक कला को कम कर रही है। सांझी माई को समृद्धि उत्थान और उन्नति का प्रतीक और माँ भगवती का ही रूप माना गया है। श्रद्धाओं के घरों में सांझी के रूप में नौ देवी नौ दिन तक निवास करती है। यह नौ दिन का सफर तालाब पर शुरू होता है और तालाब पर ही खत्म होता है। सांझी बनाने, पूजने और विसर्जन की धार्मिक क्रियाएँ उस समय से शुरू की गई थी, जब सांझी माई के साथ सिर्फ तालाब का महत्व जुड़ा है। गांव की महिलाएं अपने हाथों से खुद तालाब की मिट्‌टी से घर लाती थी। घर में उसी मिट्‌टी से सांझी माई और उनके परिवार का निर्माण करती थी। नौ दिन तक सांझी माई को पूजन के बाद गाँव के बच्चे, महिलाएँ आदि समूह के साथ गीत गाते हुए तालाब के किनारे पहुँचते थे। विधि–विधान के साथ साँझी माई का तालाब में विसर्जन किया जाता था तथा उनके साथ ढाई दशक पूर्व तक सांझी माई के साथ उनका भाई सांझा आकाश में उड़ते तोते, वन में नाचता मोर, चमचमाते तारे, चांद सूरज का भी विसर्जन किया जाता था।

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर हम कह सकते है। भारत के पश्चिमी उत्तर प्रदेश में लोक कलाओं का अभी भी बोल बाला है, जिसमें लोक मानस, लोक जीवन व लोक व्यवहार की छटा का दिग्दर्शन सहज ही हो जाता है। लोक कला में अभिव्यक्ति के आकार परम्परा से बधे होते हैं। लोक कला में स्वाभाविकता व सहजता अनिवार्य है, जिनमें अनुष्ठान भी सन्निहित रहते है। यह अनुष्ठान परम्पराओं, धार्मिक मान्यताओं से सम्बन्ध होते हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि लोक कला और संस्कृति का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध जैसे मनुष्य के केवल एक अंग को हम मनुष्य नहीं कह सकते उसकी प्रकार एक दूसरे के बिना संस्कृति व लोक कला का अस्तित्व भी नहीं है। समाज परम्पराओं से अर्जित स्वच्छ जीवंत व सुसंस्कारित करने वाले जीवन मूल्यों से विमुख हो रहा है और परम्पराओं को स्वेच्छा से परिवर्तित कर रहा है। समाज में संस्कृति विच्छिन्नता और लोक संस्कृति के प्रति उपेक्षापूर्ण है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. चित्रकला एवं लोक कला के विविध आयाम, शेखर चन्द जोशी, 2009
2. कला निबन्ध– डॉ0 गिर्राज किशोर अग्रवाल 'अशोक', 1971
3. कला दीर्घा, लखनऊ
4. लोक संस्कृति की रूपरेखा– कृष्ण देव उपाध्याय
5. भारतीय लोक कला के अभिप्राय– डॉ0 मंजुल चतुर्वेदी, स्वाति पब्लिकेशन, दिल्ली।
6. https://hinditutoro.in/lok-kala
7. hi.m.wikipedia.org